

विक्रम संवत्-२०३६, भाद्रपदा सुद्ध-६, सोमवार, ता. १५-९-१९८०
पयनामृत-३८४, ३८७, ३९० प्रपचन नं. ३४

आज पर्युषणका दूसरा दिन है. माईव-निर्मानता. माईव नामका धर्म है. वह होता है तो चारित्रका भेद और चारित्र सम्यग्दर्शनपूर्वक होता है. जहां सम्यग्दर्शन नहीं है.. सूक्ष्म बात है. अंतर आत्मा आनंदकंद चिद्घन, उसके अनुभवमें चीज आयी, उस चीजकी मालात्म्यकी किमतसे उसको माईव नाम निर्मानता रहती है. किसी भी चीजके कारण उसको मान नहीं आता. वह कहते हैं.

उत्तमणाणपहाणो, उत्तमतवयरणकरणसीलो वि।

अप्पाणं जो हीलदि, महवरयणं भवे तस्स॥३९५॥

अन्वयार्थ :- 'जो मुनि उत्तम ज्ञानसे तो प्रधान हो...' चार-चार ज्ञान प्रगट हुआ हो, आलाहा..! बारह अंगका ज्ञान प्रगट हुआ हो, तो भी निर्मानता है. क्योंकि मेरी पर्याय पामर है. बारह अंगका ज्ञान वह भी पामरता है. स्वामी कार्तिकेयमें ३१३ गाथामें कहा है, ३१३ गाथामें. धर्मी जो अपनेको ज्ञानका भान है और अपनी दृशामें अल्पज्ञता है, वस्तु पूर्ण भरी है. परंतु पर्यायमें अभी पामरता है. क्योंकि कहां केवलज्ञानादि उसके आगे अपनी पर्याय पामर है. आलाहा..! जैसे अपनेको पामर मानते हैं.

सम्यग्दृष्टि, साधु संत सख्ये भावविंगी अपना पूर्ण प्रभु भगवान, आत्माको तो भगवान मानते हैं, परंतु पर्यायमें पामरता मानते हैं. आलाहा..! कहां केवलज्ञान, कहां केवलदर्शन और कहां मेरी दृशा! जैसे अपनेको पामरता, निर्मानता, माईवता प्रगट होती है. आलाहा..! बारह अंगका ज्ञान हो. चार ज्ञान प्रगट हुआ हो तो भी कहते हैं, 'अप्पाणं हीलदि' आत्माको निंदे. आलाहा..! अभिमान न हो जाय, थोडा ज्ञानपना किया कि बाहर प्रकाशमें आये.. आलाहा..! 'अप्पाणं हीलदि' पाठ है.

'महवरयणं भवे तस्स'. आत्माको चाहे जितना शास्त्रज्ञान हो या चारित्रकी किया हो, परंतु पूर्ण सर्वज्ञके आगे अपनी पर्यायको पामरता ज्ञानकर मान होता नहीं. निर्मान और माईव गुण होता है. माईव गुण आज पर्युषणका दिन है. माईव आदि चारित्रका भेद है. चारित्र सम्यग्दर्शन सहित होता है. उसमें यह चारित्रका

भेद तो अपनी ऋद्धि जिसने देयी, अंतरमें ज्ञानादि अनंत ऋद्धि जिसने श्रद्धा करके मानी, उसकी पर्यायमें याहे जितना विकास हो तो भी डेवलज्ञानके आगे वे अपनेको पामर मानते हैं. जैसे निर्मानता, माईवता, नर्मी प्रगट होती है.

यार ज्ञान और यौदह पूर्वकी रचना गौतमस्वामी गणधर अंतर्मुर्तमें रचना करे. वह भी अपनी पर्यायमें सर्वज्ञ भगवानके आगे पामर मानते हैं. आलाहा..! तो किसका मद्द करना? किसका मान करना? ऐसा निर्मान. अपनी आत्माको 'हीलदि' विभा है यहां. याहे जितनी दशा हो, पूर्ण सर्वज्ञ नहीं. जब तक पूर्ण डेवलज्ञान नहीं है, तब तक अपनेको निंदते हैं-निंदा करते हैं. अरे..! आत्मा! कहां तेरी ऋद्धि! तेरी ऋद्धिका पार नहीं अंदर भगवान! और तेरी पर्यायमें तो पामरता है. जैसे अपनेके निंदते हैं और अपनी पर्यायमें निर्मानतासे पामरता मानते हैं. आलाहा..! उसका नाम निर्मान गुण है.

अपने यहां ३८४, वह चलता है न? बाकी है. आलाहा..! 'सर्व निधानके प्रगट अंशको वेदकर...' आलाहा..! कहते हैं, प्रभु! तेरेमें तो अनंत-अनंत आनंद और अनंत शांति भरी है न, नाथ! उसमेंसे थोडा अेक अंश तो वेदन कर. आलाहा..! सूक्ष्म बात है, भाई! क्रियाकांडसे यह चीज मिलती नहीं. आलाहा..! अंतरमें 'सर्व निधानके प्रगट अंशको वेदकर...' आभिरमें है, आभिरमें. 'तू तूम हो जयगा. पश्चात् पुरुषार्थ करते ही रहना...' आलाहा..! अंतर स्वरूपका भान हुआ कि मैं तो आनंदका निधान, आनंदका जगना. मेरी चीज तो अतीन्द्रिय आनंदका जगना-निधान है. तो जबतक पूर्ण आनंद प्रगट न हो, तबतक पुरुषार्थ करते ही रहना. आलाहा..! अंतरमें पुरुषार्थ करते ही रहना, जबतक पूर्ण स्वभाव न प्रगट हो.

'जिससे पूर्ण निधानका भोक्ता होकर...' आलाहा..! है? 'पश्चात् पुरुषार्थ करते ही रहना जिससे पूर्ण निधानका भोक्ता होकर...' आया है? माणिक्यंदज! अंतिम पंक्ति है. आलाहा..! 'पश्चात् पुरुषार्थ करते ही रहना...' आत्माका भान हुआ, निधान अंदर भरा है, तो भी पुरुषार्थ तो अंदरमें करते ही रहना. 'जिससे पूर्ण निधानका भोक्ता होकर...' पूर्ण निधानका पर्यायमें-अवस्थामें भोक्ता होकर 'तू सदाकाव परम तूम-तूम रहेगा.' आलाहा..! वह तूमि बाहरसे आती नहीं. तूमि बाहरसे होती नहीं. तूमि तो अंदरमें आनंद, आनंद जे पूर्णानंद प्रभु, उसका पुरुषार्थ स्वभावमें करते-करते जहां पूर्ण दशा प्रगट हुयी, तूम-तूम हुआ, वह कृतकृत्य हुआ. आत्मा तो कृतकृत्य तो था ही, पर्यायमें कृतकृत्य हो गया. आलाहा..! ३८४ (पूरा हुआ). अब, ३८७.

आत्मा उत्कृष्ट अज्ञायबधर है. उसमें अनंत गुणरूप अलौकिक आश्चर्य भरे हैं. देखने जैसा सब कुछ, आश्चर्यकारी जैसा सब कुछ, तेरे अपने अज्ञायबधरमें ही है, बाह्यमें कुछ नहीं है. तू उसीका अवलोकन कर न! उसके भीतर एक बार आंखोंसे भी तुझे अपूर्व आनंद होगा. वहांसे बाहर निकलना तुझे सुहायेगा ही नहीं. बाहरकी सर्प वस्तुओंके प्रति तेरा आश्चर्य टूट जायगा. तू परसे विरक्त हो जायगा. ३८७.

३८७. नीचे है. 'आत्मा उत्कृष्ट अज्ञायबधर है.' है? ३८७. है? निकला? ३८७. आत्मा.. ३८६के नीचे. आत्मा अज्ञायबधर है. आलाहा..! जिसमें यमत्कारिक चीजें पडी हैं. अनंत ज्ञान, दर्शन आदि अनंत.. अनंत.. अनंत अज्ञायबधर है. 'उसमें अनंत गुणरूप अलौकिक आश्चर्य भरे हैं.' आलाहा..! तेरेमें प्रभु..! आलाहा..! आचार्य तो प्रभु कलकर बुलाते हैं. समयसारकी ७२ गाथामें आत्माको भगवान.. जैसा कला. आलाहा..! समयसार-७२ गाथा. प्रभु! तेरी पर्यायमें जो पुण्य और पापका भाव होता है, वह तो मलिन है. शुभ-अशुभ भाव तो मलिन है. तू तो भगवान है न! जैसा कला है. यहां भी वह कला कि, 'उसमें अनंत गुणरूप अलौकिक आश्चर्य भरे हैं.' आलाहा..!

'देखने जैसा सब कुछ,...' वह ना? 'देखने जैसा सब कुछ, आश्चर्यकारी जैसा सब कुछ...' देखने जैसा सब कुछ और आश्चर्यकारी सब कुछ. आलाहा..! 'तेरे अपने अज्ञायबधरमें ही है,...' आलाहा..! यह तो अलौकिक बात है. रातको बहिन थोडा-थोडा जोले थे. उसमें बलनोंने गुप्ततासे लिपि लिया. उनको तो मालूम भी नहीं था. आलाहा..! क्या कला? 'देखने जैसा सब कुछ,...' जो चीज है और 'आश्चर्यकारी जैसा सब कुछ, तेरे अपने अज्ञायबधरमें ही है,...' आलाहा..! तेरे अंतरमें आनंदघर, अनंत गुणरत्नसे भरा पडा है, प्रभु! आलाहा..! तुझे तेरी महिमा आयी नहीं. और परकी महिमा अंतरमेंसे छूटी नहीं. तो परकी महिमा छूटे बिना अंतरमें महिमा आती नहीं. आलाहा..! यह तो मूल चीज है. यह कोई उपर-उपरकी चीज नहीं है.

'बाह्यमें कुछ नहीं है.' आलाहा..! तेरी चीजमें सब है. अनंत आनंद, अनंत ज्ञान, अनंत वीर्य, अनंत प्रभुता जैसी-जैसी अनंती शक्तिका भंडार भगवान आत्मा है. जो सब कुछ देखने लायक और आश्चर्य करने लायक हो वह सब कुछ तेरेमें है. आलाहा..! बाहरमें कुछ देखने लायक या आश्चर्यकारी कोई वस्तु है नहीं. आलाहा..!

‘तू उसीका अवलोकन कर न!’ प्रभु! आलाला..! तेरेमें अनंत-अनंत गुणरत्नका भंडार-भण्डाना भरा है. वल तूने कभी देखा नहीं, कभी नजर की नहीं, कभी अवलोकन किया नहीं और बाहरमें लटकता रहता है. अक बार अवलोकन तो कर. आलाला..! यह करनेकी चीज है. लगे दुःखी. यहां तो वीतरागभाव है. आलाला..!

क्योंकि आत्मा वीतरागभावसे भरा पडा है. वीतरागभावका पिंड आत्मा है. आलाला..! कभी सुना नहीं, कभी नजर की नहीं. क्रियाकांडके आडे, बाह्य प्रवृत्तिके आडे अंदर चीज क्या है, वर्तमानमें तो सुनना मिलना मुश्किल हो गया है. अंतर अज्ञायबधर. आलाला..! उसीका अवलोकन (कर), ‘बाह्यमें कुछ नहीं है. तू उसीका अवलोकन कर. उसके भीतर अक बार जांकेसे...’ आलाला..! प्रभु! तेरी चीज ऐसी कोई है कि क्रियाकांड तो तुच्छ है. दया, दान, व्रत, लक्ति, पूजा आदि सब ... है, राग है. वल सब तो जहर है. आत्मा अमृतका सागर प्रभु, उससे विद्ध्र भाव है. आलाला..! कभी विचार भी किया नहीं. कभी अंतरमें क्या चीज है, सुना भी नहीं. और बाहर लटकता रहता है. वस्तु अंदर है और जोजने बाहर जाता है. बाह्य क्रियाकांडसे अंदर मिले. ऐसा अनंत-अनंत काल गया, प्रभु! आलाला..!

‘भीतर अक बार जांकेसे भी तुजे अपूर्व आनंद होगा.’ आलाला..! तू अक बार अंदरमें देख. लार्! यह तो अलौकिक बातें हैं! आलाला..! अक बार भी अनंत कालमें अक बार तू देख तो सली. बाहर तो देख-देखकर जिंदगी व्यतीत की, अनंत जिंदगी गयी. अक बार.. आलाला..! ‘जांकेसे भी तुजे अपूर्व आनंद होगा.’ आला..! ‘वहांसे बाहर निकलना तुजे सुहायगा ही नहीं.’ ऐसी चीज है प्रभु तेरी. आलाला..! तेरी चीज ऐसी अंदर है कि उस पर जुकनेसे बाहर निकलना तुजे रुयेगा ही नहीं. आला..! आनंदका नाथ..! बाहर निकलनेसे तो राग होता है और राग तो जहर है. चाले तो शुभराग हो, दया, दान, लक्ति, व्रत, पूजा आदि है तो राग और जहर. आलाला..! क्यों? कि लगवान आत्मा तो अमृतस्वरूप अमृतसागर है. उससे यह परिणाम विद्ध्र है. तो अमृतसे विद्ध्र है वल जहर है. आला..! और उससे लाभ होगा ऐसा मानता है. वल तो मिथ्यात्व भाव है. आलाला..! बाह्य क्रियाकांडसे अंदरमें कुछ लाभ होगा, वल तो मिथ्यादृष्टि जैन नहीं. उसको जैनकी भबर नहीं.

जैन उसको कहते हैं.. आलाला..! ‘घट घट अंतर जिन बसे, घट घट अंतर जैन.’

घट घट अंतर जिन बसे, घट घट अंतर जैन.

मतमदिराके पानसो मतवाला समजै न.

बाहरके अभिमानी, बाह्य चीजमें अधिकपना माननेवाला अंतरकी चीजको अधिकपने देबनेका अवसर लेते नहीं. आह्ला..! सेठ! ऐसी बात है, प्रभु! यहां तो ऐसी बात है. माणिक्यंदज्ज! यहां सागरमें मिले ऐसा नहीं है. आह्ला..! ओहो..!

‘वहांसे बाहर निकलना तुझे सुलायगा ही नहीं. बाहरकी सर्व वस्तुओंके प्रति तेरा आश्चर्य टूट जायगा.’ आह्ला..! तेरी चीजमें अंतर दृष्टि देबनेसे बाहरकी चीजकी विस्मयता, आश्चर्यता टूट जायगी. आह्ला..! अरबों रुपये और चक्रवर्तीका पद हो, ईन्द्रका पद हो परंतु अंतर दृष्टि देबनेसे सम्यग्दर्शनमें तुझे उस चीजका आश्चर्य नहीं लगेगा. आह्ला..! तेरी चीज ही आश्चर्यकारी है. अलौकिक अद्भुत निधान है. उसके आगे तुझे कोई चीजमें विस्मयता आयेगी ऐसा है नहीं. आह्ला..! ऐसी विस्मयकारी चीज है. आह्ला..! यह तो अभी प्रथम बात है, यह तो सम्यग्दर्शनकी बात है. चारित्र तो सम्यग्दर्शनके बाद. सम्यग्दर्शन न हो यहां चारित्र कहां है? आह्ला..! सम्यग्दर्शन होनेके बाद अंदर चारित्र (होता है). चारित्र-चरना, चरना नाम रमना. परंतु किसमें? जो चीज देभी है उसमें. परंतु जो चीज देभी नहीं, उसमें रमना कहां आया? आह्ला..! भगवान आत्मा ज्ञानस्वप्नी आनंदका पिंड प्रभु, जिसने देभा ही नहीं वह उसमें रमे कहांसे? चारित्र कहांसे होगा? आह्ला..! ऐसी चीज है.

‘बाहरकी सर्व वस्तुओंके प्रति तेरा आश्चर्य टूट जायगा. तू परसे विरक्त हो जायगा.’ आह्ला..! भगवान आत्मा असंख्य प्रदेशी अनंत गुणका धणी. उसके अनंत गुणको रलनेके लिये अनंत प्रदेश नहीं चालिये. आह्ला..! असंख्य प्रदेशमें अनंत गुण भरे हैं. अरुप स्वभाव तेरी नजर गयी नहीं, ईसलिये तेरे निधानकी महिमा, निधानकी किमत आयी नहीं. और उस निधानकी किमत आये बिना परकी किमत हटेगी नहीं. आह्ला..! परकी किमत, बहुमान अंतरकी चीजका बहुमान आनेसे बाह्य चीजकी विस्मयता हट जायगी. आह्ला..!

मुमुक्षु :- जबतक अपनी आत्मामें न आये, तब तक ..

उत्तर :- महिमा अंदर अनंत काल हुआ, उसे यह चीज क्या है, कियाकांडकी महिमा ली, उसको ईस चीजकी महिमा नहीं आती है, तबतक आती है. राग, दया, दान, व्रत, भक्ति, पूजा वह सब विकल्प राग है. अपनी चीजकी महिमा

न आवे तबतक उस रागड़ी मलिमा नही जाती. आलाला..! औसी यीज है, प्रभु! दुनियासे तो ईर्क है. मार्ग तो यह है परमसत्य. आलाला..!

‘तू परसे विरक्त हो जायगा.’ आलाला..! ३८७ (पूरा) हुआ. उसके बाद ३८८ न?

मुनिराजको शुद्धात्मतत्त्वके उग्र अवलंबन द्वारा आत्मामेंसे संयम प्रगट हुआ है. सारा ब्रह्मांड पलट जाये तथापि मुनिराजकी यह दृढ संयमपरिणति नहीं पलट सकती. बाहरसे देखने पर तो मुनिराज आत्मसाधनाके हुत वनमें अकेले बसते हैं, परंतु अंतरमें देखें तो अनंत गुणसे भरपूर स्वप्ननगरमें उनका निवास है. बाहरसे देखने पर भले ही वे क्षुधावंत हों, तृषावंत हों, उपवासी हों, परंतु अंतरमें देखा जाये तो वे आत्माके मधुर रसका आस्वादन कर रहे हैं. बाहरसे देखने पर भले ही उनके चारों ओर घनघोर अंधेरा व्याप्त हो, परंतु अंतरमें देखो तो मुनिराजके आत्मामें आत्मज्ञानका उजाला झैल रहा है. बाहरसे देखने पर भले ही मुनिराज सूर्यके प्रजर तापमें ध्यान करते हो, परंतु अंतरमें वे संयमरूपी कल्पवृक्षकी शीतल छायामें विराजमान हैं. उपसर्गका प्रसंग आये तब मुनिराजको औसा लगता है कि-‘अपनी स्वप्नस्थिरताके प्रयोगका मुझे अपसर मिला है ईसलिये उपसर्ग मेरा मित्र है’. अंतरंग मुनिदशा अद्भुत है; वहां देहमें भी उपशमरसके ढाले ढल गये होते हैं. ३८८.

३८८ है. ३८८-३८९. किसीने लिखा है कि यह पढना. ‘मुनिराजको...’ ३८८. ‘शुद्धात्मतत्त्वके उग्र अवलंबन द्वारा...’ उसको मुनिराज कहते हैं. आलाला..! है? ‘मुनिराजको शुद्धात्मतत्त्वके उग्र अवलंबन द्वारा...’ आलाला..! शुद्धात्मतत्त्व निर्मलानंद प्रभु, उसका उग्र अवलंबन यलता है. उसका नाम मुनिपना है. कोई पंच मलाप्रत या अट्ठार्थस मूलगुण पावे, वह तो अनंत बार अलविने भी पावे और लविने भी पावे. वह कोई यीज नहीं. आलाला..! ‘शुद्धात्मतत्त्वके उग्र अवलंबन द्वारा आत्मामेंसे संयम प्रगट हुआ है.’ आलाला..! देखो! कुछ बाहरसे नहीं आया है. शुद्धात्मतत्त्वका भान तो पहले हुआ है, सम्यग्दर्शन, बादमें उग्र अवलंबन (लिया है), भगवान् पूरानंदका वज्र बिंब ध्रुव, आलाला..! अनंत गुणका पिंड प्रभु, उसके अवलंबन द्वारा ‘आत्मामेंसे संयम प्रगट हुआ है.’ संयमकी व्याख्या. संयम कोई श्रवण पावे और नज्ञ हो जाय, पंच मलाप्रत ले, वह कोई संयम

नहीं है. आलाला..!

संयम तो यह है. 'शुद्धात्मतत्त्वके...' तो पहले शुद्धात्म तत्त्व क्या है, उसका भान होना (याहिये). भान होनेके बाद शुद्धात्मतत्त्वके उग्र अवलंबन द्वारा आत्माभेसे संयम प्रगट हुआ है. संयम-चारित्र जैसे प्रगट होता है. चारित्र कोई किया बाह्य किया नहीं है. पंच महाप्रत, अट्ठाईस मूलगुण वह कोई चारित्र नहीं है. आलाला..! अरे..! अनंत-अनंत काल व्यतीत हुआ, अनंत काल चला गया, कभी उसने अपने निज तत्त्वकी क्या चीज है, उस पर दृष्टि, महिमा आयी नहीं. बाहरकी महिमा गयी नहीं और यहांकी महिमा आयी नहीं. आलाला..! और बाहरमें जैसे कुछ पांच, पचीस कोड हो, उसमें कोड, दो कोडका भ्रम करे तो उसमें जैसा हो ज्ञाय कि हमने कुछ धर्म किया. कुछ किया. कुछ किया नहीं, पाप किया. पैसा मेरा है और मेरा मानकर भ्रम किया तो अजब जडको अपना माना वह तो मिथ्यादृष्टि है. आलाला..! जैसी बात कहां है?

जड चीजको अपनी माना, जो अपनेसे त्रिकाल भिन्न है.. आलाला..! जिसका द्रव्य, गुण और पर्याय. द्रव्य नाम वस्तु, गुण नाम उसकी शक्ति, पर्याय नाम अवस्था. अपनेसे जडके द्रव्य-गुण-पर्याय, लक्ष्मी आदि शरीरादि तीनों काल भिन्न है. आलाला..!

मुमुक्षु :- जैसेसे काल चलता है.

उत्तर :- धूल भी चलता नहीं है. आला..! अज्ञानी मानता है. वह तो बात चलती है. तीसरी गाथामें तो जैसा भी कला, समयसारमें, कि अंक द्रव्य दूसरे द्रव्यको छूता नहीं. आलाला..! समयसार, तीसरी गाथा. 'एयत्तणिच्छयगदो समओ सव्वत्थ सुंदरो लोणे' अंक तत्त्व दूसरे तत्त्वको कभी छूआ नहीं. आलाला..! आत्माने लक्ष्मीको कभी स्पर्श नहीं किया, छूआ नहीं. अरर..र..! यह मान्यता. समयसार, तीसरी गाथा है. समजमें आया? आला..! तीसरी गाथा है न?

'धर्म,...' छः पदार्थ है न? 'अधर्म-आकाश-काल-पुद्गल-ज्वद्रव्यस्वरूप लोकमें सर्वत्र जो कुछ जितने जितने पदार्थ हैं सभी निश्चयसे (वास्तवमें) अकत्वनिश्चयको प्राप्त होनेसे ही सुंदरताको प्राप्त होते हैं, क्योंकि...' आला..! 'अपने अनंत धर्मोंके चक्को (समूहको) चुंबन करते हैं,...' प्रत्येक पदार्थ अपनेमें रही शक्ति और पर्याय, उसको चुंबन नाम स्पर्श करते हैं, स्पर्श करते हैं. 'तथापि वे परस्पर अंक दूसरेको स्पर्श नहीं करते,...' आलाला..! तीसरी गाथा. लक्ष्मीको छूता नहीं, स्पर्शता नहीं. शरीरको आत्मा छूता नहीं.

मुमुक्षु :- ..

उत्तर :- वल लोती ली नली. कली सुनल नली, जैन धर्म क्यल है? आललल..! जैन धर्म क्यल है? ओलोलो..!

अनंत परमलणुकल पलंड अंगूली है. उसमें अेक परमलणु दूसरे परमलणुकु छूयल नली. क्यलंकल अेक परमलणुमें अपनेमें अस्तल है और परसे नलस्तल है. आललल..! तो परसे नलस्तल है तो परकु छूअे कलसे? आललल..! अरे..! यलं तो कल, सब आत्मल दूसरेकु स्पर्श नली करते. आललल..! अपनी पर्यय और अपनी शक्तल नलम गुणल, उसकु प्रत्येक पदलर्य स्पर्श, युंनन करते हैं. आललल..! 'तथलपल वे परस्पर अेकदूसरेकु स्पर्श नली करते,...' संस्कृत टीकल है. कुंदकुंदलचलर्यके वयन हैं, ललगवलनकी वलणी है. कुंदकुंदलचलर्यके वयन हैं, उसकी टीकल अमृतयंद्रलचलर्य करते हैं. आललल..! कौन मलने? पलगल ली कले न! यल अेक अंगूली दूसरी अंगूलीकु छूती नली, अैसल कलते हैं.

मुमुक्षु :- कुंदकुंद ललगवलन कल गये हैं, लेकलन उसकल रहस्य तो आपने ञोलवल है.

उत्तर :- उसमें है कल नली? आललल..! लम तो वलं ली थे न! आललल..! लम ली मललवलदेलेमें थे, परंतु आंनलरमें परलणुलम अैसे लो गये तो यलं कलठलवलवलडमें आ गये. आललल..!

यलं कलते हैं, अेक द्रव्य दूसरे द्रव्यकु छूअे नली, स्पर्श नली. अरेरे..! कौन मलने? आललल..! दलव, यलवल, सञ्जकु ढलठ छूती नली. ढलठकु आत्मल छूतल नली. ढलठकु आत्मल ललवलतल नली. रोलटीकु आत्मल छूतल नली. अरर.र..! यल सर्वज्ञ वीतरलग परमेश्वर त्रललोकनलथकी वलणी है.

यलं कलते हैं, मुनलरलणकु शुद्धलत्मतत्व.. शुद्धलत्मतत्व अंदर वस्तु, (उसके) 'उग्र अवलंबन दवलरल..' अंदरमें उसकल उग्र अवलंबन लेते हैं. व्यवलरकल अवलंबन नली. आललल..! रलगलदल व्यवलर रत्नत्रय आते है, परंतु अवलंबन नली. ञलनने-देनने वलयक यीज है. यलं तो 'शुद्धलत्मतत्वके उग्र अवलंबन दवलरल आत्मलमेंसे संयम प्रगत लुआ है. सलरल अ्रत्नलड पलट ञलये..' आललल..! सलरल ञगत पलट ञलये, 'तथलपल मुनलरलणकी यल दठ संयमपरलणलतल नली पलट सकती.' क्यलंकल संयमपरलणलतल अंतर शुद्धलत्मतत्वमें अंतरमेंसे, अवलंबनमेंसे प्रगत लुयी है. आललल..! उसकल नलम संयम और चलरलत्र है. अटूठलस मूलगुण और पंच मललव्रत कुंठ चलरलत्र-संयम नली है. आललल..! 'मुनलरलणकी यल दठ संयमपरलणलतल नली पलट सकती.' सलरल अ्रत्नलड पलट ञलये.. आललल..! ध्रुव ललगवलन आत्मल, उसके अवलंबनसे, सलरी

दुनिया पलट जाय परंतु उससे पलटते नहीं. आलाला..!

‘बाहरसे देखने पर तो मुनिराज आत्मसाधनाके हेतु वनमें अकेले बसते हैं,...’ है? वनमें अकेले रहते हैं. आलाला..! चक्रवर्ती राजा हो, तीर्थंकर हो, अकेले वनमें चले जाते हैं. आलाला..! अंदर कुछ देखा है, उसका साधन करनेको निकलते हैं. महा अचिंत्य पदार्थ! दुनियामें दूसरा है नहीं. ऐसी चीजको अंदरमें देभी, जानी, अनुभवी. आलाला..! उसका साधन करनेको वनमें अकेले चले जाते हैं. आलाला..! है? ‘परंतु अंतरमें देखे तो अनंत गुणसे भरपूर स्वप्ननगरमें...’ आलाला..! जैसे बाहरमें वनमें हैं, अंदरमें स्वप्ननगरमें हैं. स्वप्ननगर-आत्मा. अंतर.. अंतर.. अंतर अनंत ऋद्धि भरी है. आनंद, शांति आदि स्वभावकी ऋद्धि अनंत-अनंत भरी है. आलाला..! ‘अंतरमें देखे तो अनंत गुणसे भरपूर स्वप्ननगरमें उनका निवास है.’ जैसे देखो तो वनमें हैं. वैसे देखो तो अंदरमें हैं. आलाला..! अरेरे..! ऐसी बातें.

यह तो जन्म-मरण रहित होनेकी बात है, भैया! बाकी चार गति पुण्यादि करे, वह चार गतिमें रजडेगा. आलाला..! सुवरमें अवतार लेकर विष्टा जाये. आलाला..! सुवर-सुवर. भुंड. भुंड. जैसे अवतार अनंत बार किये, प्रभु! अरबोपति, कोडोपति अनंत बार हुआ. देव अनंत बार नौवीं त्रैवेयकमें हुआ. परंतु आत्मऋद्धिकी दृष्टि कभी मानी नहीं, जानी नहीं. आलाला..!

‘स्वप्ननगर...’ आलाला..! बाहर तो ऐसा दिखे के अकेले वनमें हैं. ‘अंदरमें देखे तो स्वप्ननगरमें उनका निवास है.’ ऐसा मुनिपना है, सेठ! मुनिपना अकेली बाह्य किया (करे) और नज्ञ हो जाय, जय नारायण करे ऐसी यह चीज नहीं है. आलाला..! आलाला..! ‘स्वप्ननगरमें निवास है.’

‘बाहरसे देखने पर लवे वे क्षुधावंत हों,...’ क्षुधावंत दिखे. शरीरमें ‘तृषावंत हों, उपवासी हों, परंतु अंतरमें देखा जाय तो वे आत्माके मधुर रसका आस्वादन कर रहे हैं.’ आलाला..! बाहरमें शरीरमें क्षुधा लगी हो, तृषा लगी हो. आलाला..! उपवासी हों, ‘परंतु अंतरमें देखा जाय तो वे आत्माके मधुर रसका आस्वादन कर रहे हैं.’ अंतर अमृतके स्वादका अनुभव कर रहे हैं. आलाला..! अरे..! ऐसी आत्माकी बात सुनी नहीं. सुननेमें आती नहीं. बाह्य प्रवृत्तिकी बातें. यह करो, वह करो, यह बनाया, वह बनाया. आलाला..!

‘बाहरसे देखने पर लवे ही उनके चारों ओर घनघोर अंधरा व्याप्त हो,...’ आलाला..! बाहरसे वनमें.. तीन बात ली. अेक बाहरसे वनमें हैं, अंदरमें स्वप्ननगरीमें

हैं. आलाला..! बाहरमें क्षुधा-तृषा है, अंदरमें आत्माका अंतर आनंदका मधुर रस लेते हैं. आलाला..! और तीसरा. तीसरा बोल. 'उनके चारों ओर घनघोर अंधेरा व्याप्त हो, परंतु अंतरमें देओ तो मुनिराजके आत्मामें आत्मज्ञानका उज्ज्वला झैल रहा है.' आलाला..! बाहरमें अंधेरा है, अंतरमें आत्माका उज्ज्वला है. यह चीज! लेकिन वह आत्मा कौन है (वह मावूम नहीं). यह शरीरादि, बाहरके आडे अंदर चीय कौन है, उसमें पैसा पांच-पचीस कोड, या दो-पांच अरब मिले तो हो गया..! मानों हम बडे हो गये. आलाला..!

मुमुक्षु :- जैसेवाले ऐसा कहते हैं कि हम कर्मयोगी हैं.

उत्तर :- कर्मयोगी-पापयोगी हैं. वह बात तो रातको सेठको कही थी. दसलक्षणी पर्वमें सब आये थे न? लुकमचंद्रज. दसलक्षणी धर्म पुस्तक है. आया है? उसमें तो ऐसा लिखा है कि, पैसा पुण्यसे मिलता है. परंतु पैसा वह पाप है. तो जैसेवाला पापी है. आलाला..! अरर..र..! उस पुस्तकमें है, सेठ! उस पुस्तकमें. क्यों? कि परमात्माने चौबीस प्रकारका परिग्रह कला है. चौदह प्रकारका अंतरंग-मिथ्यात्व, राग-द्वेष, अज्ञान अंदर और दस प्रकारका बाह्य. धन, धान्य, लक्ष्मी, क्षेत्र आदि. चौदह प्रकारका अंदर और दस प्रकारका बाह्य. चौबीसको भगवानने परिग्रह कला है और परिग्रह पाप है. मिला पुण्यसे, परंतु वर्तमान पाप है. आलाला..! और पापका धनी होता है, वह पापी है. दुनिया कहती है कि, पुण्यवंत है और भगवान कहते हैं, पापी है. आलाला..! दुनियासे बात अलग है, भाई! आलाला..! ऐसी बात उसने लिखी है. लुकमचंद्रजने. दसलक्षणी पर्व और कर्मबद्ध, दोनों आ गये हैं. कर्मबद्ध छपा है. ज्ञानचंद्रज! आया है? कर्मबद्ध पुस्तक बहुत अच्छा (है), बहुत अच्छा है. वह भी पहले यहांसे निकला है-कर्मबद्ध.

प्रत्येक द्रव्यमें अकेके बाद अके पर्याय होगी. इरेकार कोई करनेवाला है नहीं. आलाला..! जैसे नंबरसे अके, दोन, तीन, चार, पांच, छः, सात, आठ नंबर (होते हैं), जैसे प्रत्येक द्रव्यमें पहले नंबरमें जो पर्याय होती है वह वहां होती है. दूसरेमें दूसरी, तीसरी, चौथे, जहां होनेवाली है वहां होती है. उसमें इरेकार करनेको कोई ईन्द्र, नरेन्द्र, जिनेन्द्र समर्थ नहीं है. स्वामी कार्तिक्यमें कला है. स्वामी कार्तिक्य मुनि लुअे हैं. बहुत पुराना टिगंबर ग्रंथ है. २२०० साल पहले. उन्होंने कला है... आलाला..! भगवान तीर्थकर भी जैसे बाहरमें चले गये. क्या कहते थे? स्वामी कार्तिक्यमें.

मुमुक्षु :- पर्याय जिस कालमें होनेवाली है...

उत्तर :- हां, वल. स्वामी कलतिकुडने असा ललषल है कु कलस सडड कु डरुडड डोनेवली है, उसकु डनुदुर, नरेनुदुर, कलनेनुदुर... असा स्वामी कलतिकुडडें है. आलललल..! अलडी डढते हैं न. डेरनेकु कुड डसरुथ नलई है. आलललल..! डुरलु! तेरी नलर डदल दे. उसके डलनल कुड नलई है, वुडथ है. नलर अंदरडें दलडे डलनल डलदरकी नलरकी डलडडल तूटेगी नलई. और डलदरकी डलडडल तूटे डलनल अंदरकी डलडडल आडेगी नलई. आलललल..! डैसल डो, डंङुकुत डो, डुतुर डो, डलंड-डडीस लडके डुडे नंडरके.. आलललल..!

वलंड कुल न? नलडरुडुडीडें. डंदुरल लुओ तु अरडडतल हैं. अलडी. डंदुरल. शुकुतलंडरडें अरडडतल. आलललल..! सलठ धर डुडुकुके हैं. उसडें आठ तु कुडडतल हैं. आठ तु कुडडतल. अकेलल डैसल.. डैसल.. डैसल दलडु. अरे..! धूलडें (कुडल है)? डैसल डतनल कु कललल सलधलरश ललड, दु ललड तु डडे डो, सलधलरश धरडें. आलललल..! शललुडुडु उनडें कुलते हैं. उन लुओडुडें शललुडुडु डडी डु. अके डुडडेकी अके शललुडुडु. आलललल..! धूल है, कुल. ललड! डड २६ दलन २हे, डैतललस डंकदुडल कुडल और डंदुरल ललड डलडे कुडे थे. ललड.. ललड कुडल. उसडें है कुडल? कुल. सलठ ललडकुल कुडल अरड कु न. वल तु कलड डरवसुतु है. डरवसुतु अडनी है? और डरवसुतु अडनेसे डललती है कलती है कु डें दे सकुं और ले सकुं. आलललल..! डलदुत कुडलन डलत. डैसल डल शरीर डल लकुडी डल डंङुकुत डल कुडीरुतल, डें लुं डल दूं, वल डीक है डी नलई. डरदुरवुडकु कुलडी डुतल डी नलई. आलललल..!

अलडी आ गडल न? तीसरुी गलथलडें कुल न? अके ततुव दूसरे ततुवकु कुलडी डुतल नलई. आलललल..! कुलडी सुनल डी नलई. आलललल..! अके तु अके ततुव दूसरेकु डुतल नलई. डल अंगुली डंसकु डुतल नलई. डल कुन डलने? और अके कुडडलदुर. अकेके डलद अके कुडडरुडड डोनेवली डुती है. आगेडुडीडे डनुदुर करनेकु सडरुथ नलई. आलललल..! और उतुडलदुवुडधुव डुकुतं सतु. तु डुरतुडेकु दुरवुडडें कु उतुडलद डरुडड उस सडड डुती है, कलस डरुडडडकु अडने धुव और वुडकुल लडी आशुरड नलई है. तीनुं सडडडें सुवतंतुर हैं. डरकी आशल तु नलई, डरंतु अडनेडें कु उतुडलद डुतल है, उसकु वुडकुल आशुरड नलई है, उसकु धुवकुल आशुरड नलई है. और डुरुवकी डरुडड वुड डुती है, उसकु उतुडलद और धुवकुल आशुरड नलई है. कुन डलने? कुन सडडुडे? आलललल..! सडडडडें आडल? डुरवडनसलर, १०२ गलथल. उसडें आडल है. आलललल..!

डलंड कुलते हैं, कुलंड आडल? 'आतुडकलनकु उकुललल डैल २लल है.' अके ओर डुनलकु देडु तु अंदरेडें डैठे डुं. अंदरडें देडु तु उकुललल (है). डैतनुडडुरकुलशकुल नुरुकु डुरु. आलललल..! 'डलदरसे देडुने डर डले डी डुनलरलक सुरुडुके डुरडर तलडडें

ध्यान करते हो,...' बाहरसे तो प्रभर सूर्यके तापमें ध्यान (करते हो). 'परंतु अंतरमें वे संयमरूपी कल्पवृक्षकी शीतल छायामें विराजमान हैं.' अंतरमें तो शांतरसमें, शांतरस.. आलाहा..! शांति.. शांति.. शांति. शांतरसका बंडार भगवान आत्मा. शांतरसका अर्थ अकषायभाव, चारित्रभाव, विकाररहित भाव. जैसे शांतरससे तो भरपूर भरा है भगवान आत्मा. आहा..! बाहरसे देखो तो सूर्यके तापमें वे जडे हैं. अंदरसे देखो तो शांतरसमें स्थिर हो गये हैं. आलाहा..! अरे..! ऐसी बातें.

'उपसर्गका प्रसंग आये...' मुनिराजको. बाह्यमें कोई सिंह, बाघ, सर्प जैसा उपसर्ग (आये) 'तब मुनिराजको जैसा लगता है कि- 'अपनी स्वर्ूपस्थिरताके प्रयोगका मुझे अवसर मिला...' आलाहा..!

अेकाकी विचरतो वणी स्मशानमां, गुजराती है.

वणी पर्वतमां वाघ सिंह संयोग जे,

अडोल आसन ने मनमां नहि क्षोभता,

जैसी भावना अंतर आनंदमें.. आनंदमें.. आनंदमें... आनंदमें. जैसा आसन तो अडोल परंतु मनमें क्षोभ नहीं. और सिंह एवं बाघ शरीर लेनेको आया.

परम मित्रनो ज्ञाणे पाम्या योग जे.

यह शरीर मुझे रचना नहीं है और वह ले जाता है. तो वह मित्र है. आलाहा..! यह मुनिकी दशा!

'उपसर्गका प्रसंग आवये तब मुनिराजको जैसा लगता है कि- 'अपनी स्वर्ूपस्थिरताके प्रयोगका...' अंदरमें लीन होनेका प्रसंग मिला मुझे. आलाहा..! उपसर्ग और परिषद पर उनका लक्ष्य नहीं है. आलाहा..! आगे आयेगा. 'अपनी स्वर्ूपस्थिरताके प्रयोगका मुझे अवसर मिला है...' है? 'ईसलिये उपसर्ग मेरा मित्र है.' आहा..! श्रीमद्में आया न? 'परम मित्रनो ज्ञाणे पाम्या योग'. ध्यानमें बैठे और सिंह-बाघ आया तो मित्र आया. मुझे शरीर रचना नहीं है, उसको लेना है, तो ले जाओ. मेरी यीजमें वह नहीं है. आलाहा..! जैसा कठिन धर्म..! आलाहा..! कायर सुनकर कांप जाय, जैसा धर्म? वीतरागका जैसा धर्म? बापू! मार्ग तो जैसा है. दुनिया चाले किसी भी दूसरी रीतसे उसे जताये, कहे, माल तो दूसरा होता नहीं. 'अेक होय तीन कालमें परमार्थका पंथ'. आलाहा..!

वह कहते हैं, 'अंतरंग मुनिदशा अद्भुत है;...' है अंदर? 'वहां देहमें भी उपशरसके ढावे ढव गये होते हैं.' आलाहा..! देहमें भी उपशमरस. ...

जिसको यथार्थ द्रव्यदृष्टि प्रगट होती है उसे दृष्टिके ज़ोरमें अकेला ज्ञायक ही-चैतन्य ही भासता है, शरीरादि कुछ भासित नहीं होता। भेदज्ञानकी परिणति ऐसी दृढ हो जाती है कि स्वप्नमें भी आत्मा शरीरसे भिन्न भासता है। दिनको जगृत दृशामें तो ज्ञायक निराला रहता है परंतु रातको नींदमें भी आत्मा निराला ही रहता है। निराला तो है ही परंतु प्रगट निराला हो जाता है।

उसको भूमिका अनुसार बाह्य वर्तन होता है परंतु याहे जिस संयोगमें उसकी ज्ञान-वैराग्यशक्ति कोई और ही रहती है। में तो ज्ञायक सो ज्ञायक ही हूं, निःशंक ज्ञायक हूं; पिभाप और में कभी अेक नहीं हुये; ज्ञायक पृथक् ही है। - ऐसा अयल निर्णय होता है। स्वप्न-अनुभवमें अत्यंत निःशंकता वर्तती है। ज्ञायक उपर चढकर-उर्ध्वरूपसे विराजता है, दूसरा सब नीचे रह जाता है। ३८८.

‘जिसको द्रव्यदृष्टि यथार्थ प्रगट होती है...’ क्या कहा? द्रव्य अर्थात् वस्तु भगवान्। उसकी द्रव्यकी दृष्टि। दृष्टि यानी वल पैसा नहीं। द्रव्य यानी वस्तु आत्मा त्रिकावी। ‘द्रव्यदृष्टि यथार्थ प्रगट होती है उसे दृष्टिके ज़ोरमें अकेला ज्ञायक ही-चैतन्य ही भासता है,...’ आलाहा..! अंतरकी दृष्टि लुयी आत्माकी तो ज्ञायक आत्मा अकेला भासता है। आलाहा..! में तो ज्ञानन-देहनवाला त्रिकाव (हूं)। किसीका कर्ता-हर्ता, भोक्ता हूं नहीं। आलाहा..! ऐसा मार्ग वीतरागका सुनने मिले नहीं, वल प्रयोग कब करे? उसका ज्ञान कब करे? आलाहा..! दुनिया अनंत कालसे चार गतिमें लटक रही है।

यहां कहते हैं कि ‘जिसको द्रव्यदृष्टि...’ द्रव्य अर्थात् वस्तु भगवान्। त्रिकावी यीज सख्यिदानंद प्रभु, उसकी दृष्टि ‘यथार्थ प्रगट होती है उसे दृष्टिके ज़ोरमें अकेला ज्ञायक ही-चैतन्य ही भासता है,...’ आलाहा..! चैतन्य.. चैतन्य.. चैतन्य.. चैतन्य भासता है। ‘शरीरादि कुछ भासित नहीं होता।’ आलाहा..! भासित नहीं होता है अर्थात् उसका तो ज्ञान होता है। वल तो अपने ज्ञानमें शरीर ज्ञाननेमें आता है। आलाहा..! शरीर मेरा है, ऐसी बात तो है ही नहीं। परंतु जहां अंतरमें सम्यग्ज्ञान प्रगट हुआ, सम्यग्दर्शन प्रगट हुआ तो ज्ञानमें शरीर संबंधी ज्ञान अपनेमें अपनेसे होता है। आलाहा..! अरेरे..! ऐसी बात। ‘अकेला ज्ञायक ही-चैतन्य ही भासता है, शरीरादि कुछ भासित नहीं होता।’

‘भेदज्ञानकी परिणति ऐसी दृढ हो जाती है...’ आलाहा..! परसे भेदज्ञान। रागका विकल्प दया, दान, भगवानकी भक्ति, भगवानका दर्शन और शास्त्रका दर्शन,

सढ रलग. रलगसे ढलत्र. आललल..! है? 'ढेदलनकी डरलशुतल ऐसी दढ लो ढलती है डल सुवडनढें ढी आतुढल शरीरसे ढलत्र ढलसतल है.' आललल..! सुवडनढें ढी शरीरसे डुरढु ढगवलन ढलत्र है. आललल..! ऐसी ददृषु लो गयी है. ऐसी ददृषुका नलढ सढुडदृशन है. वलशेष कलेंगे... (शुरीतल :- डुरढलशु वडन गुरुदुवेव!)

